नईदुनिया

ब्रिक्स सम्मेलन की सफलता से चिढ़े ट्रंप का टैरिफ दांव

डॉ. विश्वास तिवारी

दिल्ली के भारत मडपंम में 12 से 13 सितंबर को आयोजित ब्रिक्स सम्मेलन कई मामलों में सफल हुआ। रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन, चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग और भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की एक ही मंच पर उपस्थिति और कई व्यापारिक समझौतों ने डोनाल्ड ट्रंप की नींद उड़ा दी। इससे चिढ़कर ट्रंप ने अमेरिकी प्रतिनिधि सभा में रूस और ईरान पर प्रतिबंध लगाने वाले 'लिंडसे ग्राहम सैक्शनिंग रशिया ऐंड ईरान एक्ट' को मंजूर करा लिया है। वहां की सीनेट, यानि ऊपरी सदन पहले ही इसे पारित कर चुकी है। राष्ट्रपति ट्रंप ने इस पर हस्ताक्षर करके इस बिल को कानून बना दिया है। इस कानून के बनते ही अमेरिकी प्रशासन को यह अधिकार दिया है कि वह रूस और ईरान से तेल और गैस खरीदने वाले देशों पर वह 100 फीसदी तक टैरिफ लगा सकता है। किस देश पर कितना टैरिफ लगेगा यह अभी तय नहीं है, लेकिन चूंकि भारत रूस से भारी मात्रा में तेल और गैस खरीदता है, इसलिए वह उसकी चपेट में आ सकता है।

अमेरिका को लगता है कि जैसे उसने दो दशक पहले चीन को अपनी तकनीक पूंजी और सहयोग देकर मदद की थी और वह आज उसका सबसे बड़ा प्रतिस्पर्धी हो गया है इसी तरह कहीं भारत भी उसके मुकाबले में खड़ा न हो जाए। इस समय होमुर्ज जल संकट के कारण भारत अपने आयात का लगभग 50 फीसदी क्रूड ऑयल रूस से खरीद रहा है। अमेरिका ने भारत के साथ ही चीन, स्लोवाकिया, हंगरी और अजरबैजान को भी निशाने पर लिया है, हालांकि, यह पहली बार नहीं है जब अमेरिका ने भारत पर टैरिफ लगाने की धमकी दी है। जनवरी 2025 में सत्ता संभालने के बाद राष्ट्रपति ट्रंप पूरे विश्व को टैरिफ लगाने की धमकी देने लगे थे। एक समय तो उन्होंने भारत पर 'दंडस्वरूप' अतिरिक्त 25 फीसदी टैरिफ लगाने का एलान भी कर दिया था, जिसे उन्होंने बाद में घटाकर 10 फीसदी कर दिया था, क्योंकि भारत पर टैरिफ लगाने का असर स्वयं उसकी अर्थव्यवस्था पर पड़ने लगा था। नरेंद्र मोदी को अपना सबसे अच्छा मित्र कहने वाले अमेरिकी राष्ट्रपति अगर मनमाने तरीके से भारत पर टैरिफ लगाते है तो यह उनके अहंकार का ही परिचय देगा। उक्त विधेयक का समर्थन करने वाले अमेरिकी सांसदों का कहना है कि अगर दूसरे देश रूस से तेल और गैस खरीदना बंद कर देंगे तो रूस आर्थिक रूप से कमजोर हो जाएगा और यूक्रेन

नरेंद्र मोदी को अपना सबसे अच्छा मित्र कहने वाले अमेरिकी राष्ट्रपति अगर मनमाने तरीके से भारत पर टैरिफ लगाते है तो यह उनके अहंकार का ही परिचय देगा। उक्त विधेयक का समर्थन करने वाले अमेरिकी सांसदों का कहना है कि अगर दूसरे देश रूस से तेल और गैस खरीदना बंद कर देंगे तो रूस आर्थिक रूप से कमजोर हो जाएगा और यूक्रेन के खिलाफ उसे युद्ध बंद करना होगा, क्योंकि रूस यूक्रेन के खिलाफ बेमतलब की लड़ाई लड़ रहा है। अगर रूस यूक्रेन से युद्ध लड़ रहा है तो क्या इसमें चीन और भारत की गलती है? यह अमेरिका का दोगलापन है, वह ईरान से तो अपना युद्ध रोक नहीं पा रहा है और हमें दोषी ठहरा रहा है।

के खिलाफ उसे युद्ध बंद करना होगा, क्योंकि रूस यूक्रेन के खिलाफ बेमतलब की लड़ाई लड़ रहा है। अगर रूस यूक्रेन से युद्ध लड़ रहा है तो क्या इसमें चीन और भारत की गलती है? यह अमेरिका का दोगलापन है, वह ईरान से तो अपना युद्ध रोक नहीं पा रहा है और हमें दोषी ठहरा रहा है। चीन के बाद भारत ने भी अमेरिका को जवाब दे दिया है कि वह 140 करोड़ भारतीयों के हितों की रक्षा के लिए हरसंभव प्रयास करेगा और वह अपने ऊर्जा हितों की रक्षा के लिए किसी भी धमकी से नहीं डरेगा। अगर अमेरिका इसी तरह से मनमानी करता रहा तो भारत और अमेरिका का होने वाला व्यापार समझौता भी अपना अंतिम रूप नहीं ले सकेगा। अमेरिका को समझना होगा कि ताली एक हाथ से नहीं बजती है।

अगर रूस से तेल खरीदने पर वाकई प्रतिबंध लग गया और खाड़ी देश से क्रूड ऑयल नहीं आ रहा है, तो अंतरराष्ट्रीय स्तर पर क्रूड ऑयल की कमी हो जाएगी और इसके भाव तेजी से बढ़ेंगे। इससे पूरे विश्व की अर्थव्यवस्था को नुकसान होगा और महंगाई बढ़ जाएगी। जब अमेरिका और ईरान में युद्ध विराम हुआ था तब अमेरिका ने ईरान से तेल खरीदने के प्रतिबंध को कुछ दिन के लिए हटा दिया था, लेकिन अब फिर से लागू कर दिया है। टैरिफ लगाने की धमकी से चीन को ज्यादा फर्क नहीं पड़ेगा, क्योंकि वह ईरान से तेल लगातार खरीद रहा है। एक तो चीन और ईरान की सीमा में कम दूरी है और वह पाइपलाइन के जरिए तेल का आयात कर रहा है। इसके अलावा वह अमेरिका से मक्के और सोयाबीन का सबसे बड़ा खरीददार है, इसलिए चीन पर भारी टैरिफ लगाने से पहले अमेरिका कई बार सोचेगा। अमेरिका का दोहरापन देखिए कि वह भारत पर रूस से तेल खरीदने पर 100 प्रतिशत टैरिफ लगाने की बात करता है, लेकिन वह खुद रूस से खरीदारी करेगा। अमेरिका ने अपनी जरूरत के हिसाब से रूस से यूरेनियम खरीदने का रास्ता खुला रखा हैं। नरेंद्र मोदी के सामने जब भी चुनौती आती है तो वह और मजबूत होकर उभरते है। अब सवाल यह है कि अगर भारत पर टैरिफ बम फटता है तो भारत के पास क्या विकल्प है और क्या तैयारी है? भारत की तैयारी इस बात को लेकर है कि तेल खरीदने के लिए किसी एक ही देश पर निर्भर नहीं रहना पड़े। अगर बढ़ा हुआ टैरिफ लगा तो भारत का जो सामान अमेरिका में निर्यात होता है उसकी कीमतें बढ़ जाएगी। तब वहां से व्यापारी यह सामान दूसरे देशों से लेने लगेंगे और भारत को नुकसान होगा। इसी को समझते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने 2025 के बाद से ही कई देशों का दौरा किया और व्यापारिक समझौते किए सबसे बड़ा समझौता उन्होंने ईयू (यूरोप) के साथ किया जिसे 'मदर ऑफ ऑल डील' कहा गया इसमें फ्री ट्रेड एग्रीमेंट पर सहमति बनी।

ब्रिटेन, फ्रांस, इटली और युनाइटेड अरब अमीरात से व्यापार के साथ निवेश की बातचीत हुई जिसमें ऊर्जा और टेक्नॉलाजी पर समझौते हुए। इसके अलावा भारत से यूरोप तक एक वैकल्पिक आर्थिक कनेक्टिविटी कारिडोर के निर्माण पर भी सहमति बनी। न्यूजीलैंड में भी 40 साल बाद किसी भारतीय प्रधानमंत्री की यात्रा हुई। उन्होंने इंडोनेशिया और आस्ट्रेलिया तक का दौरा किया और मध्य एशिया में उज्बेकिस्तान और किर्गिस्तान तक पहुंचे। भारत ने एक ओर अमेरिका से रिश्ता कायम रखा और दूसरी और भारत ने अपने दूसरे आर्थिक रिश्तों को भी फैलाया। भारत का संदेश साफ है कि अमेरिका भारत के लिए एक बड़ा बाजार है, लेकिन वह एक मात्र बाजार नहीं है। भारत ने स्पष्ट कर दिया है कि उसकी प्राथमिकता भारत की बढ़ती अर्थव्यवस्था है, उसे जहां से सस्ता तेल मिलेगा, वह उसे वहीं से खरीदेगा और अमेरिका की दबाव की राजनीति नहीं सहेगा।

पितृ ऋण से मुक्ति का मार्ग श्राद्ध परंपरा

आध्यात्मिक और सनातन दृष्टि में पितृ ऋण की अवधारणा

सनातन धर्म में मानव जीवन को तीन ऋणों से बंधा हुआ माना गया है, देव ऋण, ऋषि ऋण और पितृ ऋण। इनमें पितृ ऋण सबसे अधिक संवेदनशील और भावनात्मक माना जाता है, क्योंकि इसका संबंध हमारे अस्तित्व के मूल स्रोत से है। शास्त्रों के अनुसार जन्म से लेकर जीवन के हर पड़ाव तक हम अपने माता-पिता और पूर्वजों के त्याग और आशीर्वाद से आगे बढ़ते हैं। इसलिए उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना और उनके परलोक में सुख के लिए प्रयत्न करना प्रत्येक पुत्र-पौत्र का धर्म बताया गया है। श्राद्ध इसी कृतज्ञता का औपचारिक और शास्त्रीय रूप है, जिसे केवल कर्मकांड नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक सेतु कहा जा सकता है। यह वह माध्यम है, जो लोक और परलोक के बीच संवाद का कार्य करता है।

कर्म सिद्धांत और परलोक यात्रा का संबंध : भारतीय दर्शन जीव को उसके कर्मों के आधार पर सुख-दुख और विभिन्न योनियों की प्राप्ति की बात करता है। पुण्य कर्मों का फल स्वर्ग और पाप कर्मों का फल नर्क के रूप में बताया गया है। स्वर्ग-नर्क के भोग के बाद जीव अपने कर्मानुसार फिर से विभिन्न योनियों में जन्म लेता है। इसी परिकल्पना के आधार पर शास्त्रों में पुत्र-पौत्र आदि के लिए दिवंगत माता-पिता और पूर्वजों के निमित्त श्रद्धापूर्वक शास्त्रोक्त कर्म करने का विधान बताया गया है, ताकि उन्हें परलोक या अन्य योनियों में भी सुख प्राप्त हो सके। सनातन धर्म में श्राद्ध को पितृ ऋण से मुक्ति पाने का महत्वपूर्ण माध्यम माना गया है। भारतीय धर्मशास्त्रों में श्राद्ध न करने से होने वाले कष्टों का भी उल्लेख मिलता है। मान्यता है कि मृत्यु के बाद जीव स्थूल शरीर छोड़कर आगे की यात्रा करता है और इस यात्रा में उसके लिए पाथेय, यानी अन्न-जल की आवश्यकता होती है। ऐसा माना जाता है कि परिजन श्राद्ध और पिंडदान के माध्यम से जो अन्न-जल अर्पित करते हैं, वही इस यात्रा के लिए उसका पाथेय बनता है। यदि पुत्र-पौत्र या अन्य परिजन श्राद्ध आदि कर्म न करें तो मृत जीव को भूख-प्यास सहित अनेक कष्टों का सामना करना पड़ता है।

पिंडदान की परंपरा का मर्म : श्राद्ध के साथ-साथ पिंडदान की भी एक निर्धारित परंपरा बताई गई है। इसमें शवयात्रा के दौरान छह पिंड देने का विधान मिलता है, जिसका उद्देश्य भूमि के अधिष्ठातृ देवताओं की प्रसन्नता और भूत-प्रेतादि से होने वाली बाधाओं का निवारण माना जाता है। इसके बाद दशगात्र में दिए जाने वाले दस पिंडों के माध्यम से जीव को आतिवाहिक अर्थात सूक्ष्म शरीर प्राप्त होता है। इसके आगे एकादश से लेकर द्वादश दिन में किए जाने वाले पिंडदान और श्राद्ध के माध्यम से अन्न-जल अर्पित करने की परंपरा है। यह परंपरा केवल बाहरी कर्मकांड नहीं, बल्कि जीव की सूक्ष्म यात्रा को सुगम बनाने की एक वैज्ञानिक आध्यात्मिक प्रक्रिया के रूप में देखी जाती है। पिंड चावल, जौ, तिल, घृत और शहद से बनाया जाता है, जिसमें पंचतत्वों का प्रतीक समाहित माना जाता है।

शाप और आशीर्वाद की लोक मान्यता : धर्मशास्त्रों में श्राद्ध न करने वाले परिजनों के संबंध में कठोर मान्यताओं का भी उल्लेख मिलता है। यहां तक कहा गया है कि पितर ऐसे परिजनों को शाप दे सकते हैं। उपनिषदों में भी देवताओं और पितरों से संबंधित कार्यों में प्रमाद न करने की बात कही गई है। इसलिए श्राद्ध को दिवंगत माता-पिता और पूर्वजों के पुण्य स्मरण तथा उनके प्रति श्रद्धा व्यक्त करने का महत्वपूर्ण अवसर माना गया है। यह शाप किसी क्रोध का परिणाम नहीं, बल्कि प्रकृति के नियम की उपेक्षा का फल माना जाता है। जैसे खेत में पानी न देने पर फसल सूख जाती है, वैसे ही कृतज्ञता न व्यक्त करने पर परिवार में अशांति, असफलता और वंश वृद्धि में बाधा जैसी अनुभूतियां होती हैं। लोक में इसे पितृ दोष के नाम से जाना जाता है।

श्राद्धकर्ता को मोक्ष और संतति सुख : मोक्ष का द्वार खोलता है श्राद्ध। धार्मिक मान्यता है कि श्रद्धा के साथ विधिपूर्वक श्राद्ध करने से पितृ ऋण से मुक्त होकर मोक्ष की प्राप्ति होती है और पुन: संसार के चक्र में नहीं आते। इसी कारण पितरों की संतुष्टि और अपने वंश के कल्याण के लिए भी श्राद्ध को आवश्यक बताया गया है। महर्षि सुमन्तु के कथन के अनुसार धर्मग्रंथों में श्राद्ध को अत्यंत कल्याणकारी कर्म बताया गया है। श्राद्ध केवल एक धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि पूर्वजों के प्रति श्रद्धा और पारिवारिक दायित्वों को निभाने का माध्यम भी माना जाता है। गरुड़ पुराण, मार्कंडेय पुराण और ब्रह्म पुराण में स्पष्ट कहा गया है कि जो व्यक्ति पितृपक्ष में अपने पितरों के नाम से जल तर्पण और अन्नदान करता है, उसके पितर प्रसन्न होकर उसे आयु, विद्या, यश, बल और संतान का आशीर्वाद देते हैं। इस प्रकार श्राद्ध एक द्विपक्षीय कल्याण का कार्य है, जिसमें देने वाला और लेने वाला दोनों लाभान्वित होते हैं।

आधुनिक संदर्भ में श्राद्ध की प्रासंगिकता : आज के समय में जब संयुक्त परिवार टूट रहे हैं और युवा पीढ़ी अपनी जड़ों से दूर हो रही है, तब श्राद्ध जैसे पर्व हमें हमारे अस्तित्व की याद दिलाते हैं। यह पर्व हमें सिखाता है कि हम अकेले नहीं हैं, बल्कि हमारे पीछे कई पीढ़ियों का त्याग, तपस्या और आशीर्वाद खड़ा है। श्राद्ध के बहाने परिवार एकत्र होता है, पूर्वजों की कहानियां सुनता है और अपने बच्चों को अपनी विरासत से परिचित कराता है। यह केवल पितरों को जल देना नहीं, बल्कि अपनी संस्कृति को अगली पीढ़ी तक पहुंचाने का संकल्प है। पर्यावरण की दृष्टि से भी इसमें कौवे, गाय, कुत्ते और ब्राह्मण को भोजन कराने की परंपरा में सभी जीवों के प्रति करुणा का भाव निहित है। अन्नदान और जलदान के माध्यम से समाज में समानता और सहयोग का संदेश भी दिया जाता है। इसलिए पितृपक्ष को केवल शोक का काल नहीं, बल्कि कृतज्ञता का उत्सव मानना अधिक उचित होगा। जो समाज अपने पूर्वजों को याद रखता है, वही समाज भविष्य में भी याद रखा जाता है। यही भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र है। श्राद्ध इसी मंत्र का जीवंत प्रतीक है, जो हमें पितृ ऋण से मुक्त कर जीवन को सार्थक बनाने की प्रेरणा देता है। **(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)**

ईवी का सपना और मध्यमवर्ग की जेब

पेट्रोल की कीमत जब भी बढ़ती है, मध्यमवर्गीय परिवार का घरेलू बजट थोड़ा और सिकुड़ जाता है। रोज दफ्तर जाने वाले व्यक्ति से लेकर बच्चों को स्कूल छोड़ने वाले माता-पिता तक, निजी वाहन अब सुविधा भर नहीं, रोजमर्रा की जरूरत बन चुका है। ऐसे में इलेक्ट्रिक वाहन यानी ईवी एक आकर्षक विकल्प के रूप में सामने आए हैं। कम ईंधन खर्च, प्रदूषण में कमी और पेट्रोल पंपों पर निर्भरता से मुक्ति जैसे तर्क इन्हें भविष्य की सवारी बताते हैं। लेकिन सवाल यह है कि क्या ईवी वास्तव में उस मध्यमवर्ग के लिए भी आर्थिक रूप से सहज विकल्प बन चुकी है, जिसके लिए हर बड़ी खरीदारी से पहले कीमत, कर्ज की किस्त और रखरखाव का हिसाब लगाना जरूरी होता है?

ईवी की सबसे बड़ी ताकत उसका दैनिक संचालन खर्च है। पेट्रोल कार में हर किलोमीटर के साथ ईंधन का खर्च जुड़ता है, जबकि घर या अपेक्षाकृत सस्ती चार्जिंग सुविधा उपलब्ध होने पर इलेक्ट्रिक कार चलाने की लागत काफी कम हो सकती है। यही कारण है कि जिन परिवारों का दैनिक आवागमन अधिक है, उनके लिए ईवी का आर्थिक गणित समय के साथ बेहतर दिखाई देता है। लेकिन खरीद के समय तस्वीर कुछ अलग होती है। इलेक्ट्रिक कार की शुरुआती कीमत अभी भी कई मध्यमवर्गीय खरीदारों के लिए बड़ा निर्णय है। यानी जो बचत रोज दिखाई देती है, उसकी भरपाई खरीद के समय अतिरिक्त रकम खर्च करके करनी पड़ती है।

यहीं से ईवी का असली आर्थिक सवाल शुरू होता है। किसी वाहन की कीमत केवल शोरूम में लिखी रकम नहीं होती। उसके साथ बीमा, वित्तीय लागत, सर्विस, टायर, बैटरी की स्थिति, पुनर्विक्रय मूल्य और चार्जिंग व्यवस्था भी जुड़ी होती है। पेट्रोल कार में खरीदार को ईंधन की चिंता रहती है, लेकिन ईवी खरीदार के सामने बैटरी और चार्जिंग से जुड़े सवाल अधिक महत्वपूर्ण हो जाते हैं। बैटरी वाहन की सबसे महंगी इकाइयों में से एक है। उसकी उम्र, क्षमता में कमी और भविष्य में बदलने की संभावित लागत खरीददार के दीर्घकालिक बजट को प्रभावित कर सकती है।

हालांकि यह भी समझना जरूरी है कि हर

ईवी मालिक को बैटरी बदलवाने की जरूरत कुछ वर्षों में ही पड़ जाएगी, ऐसा मान लेना सही नहीं होगा। वास्तविक जीवन में बैटरी का प्रदर्शन वाहन, उपयोग, तापमान, चार्जिंग व्यवहार और निर्माता की तकनीक पर निर्भर करता है। इसलिए केवल संभावित बैटरी लागत के आधार पर ईवी को महंगा या सस्ता घोषित करना उतना ही अधूरा है, जितना केवल पेट्रोल बचत के आधार पर उसे आर्थिक रूप से लाभकारी मान लेना।

ईवी की दूसरी बड़ी चुनौती चार्जिंग व्यवस्था है। घर में पार्किंग और सुरक्षित बिजली कनेक्शन वाले व्यक्ति के लिए रात में वाहन चार्ज करना आसान हो सकता है। लेकिन किराए के मकान, अपार्टमेंट या ऐसी कॉलोनी जहां निजी पार्किंग उपलब्ध नहीं है, वहां स्थिति बदल जाती है। लंबी यात्रा करने वाले व्यक्ति के लिए रास्ते में तेज चार्जिंग स्टेशन की उपलब्धता भी निर्णायक हो जाती है। सरकार की 2024 की चार्जिंग अवसंरचना संबंधी गाइडलाइन में शहरी क्षेत्रों में एक किलोमीटर गुणा एक किलोमीटर के ग्रिड में चार्जिंग स्टेशन तथा राजमार्गों पर लगभग हर 20 किलोमीटर पर चार्जिंग सुविधा की दिशा बताई गई है। भारी और लंबी दूरी वाले वाहनों के लिए 100 किलोमीटर के अंतर पर तेज चार्जिंग की व्यवस्था का भी सुझाव है।

इसका अर्थ है कि नीति स्तर पर दिशा स्पष्ट है, लेकिन उपभोक्ता के लिए अंतिम अनुभव स्थानीय अवसंरचना पर निर्भर करता है। किसी महानगर में चार्जिंग सुविधा आसानी से मिल सकती है, जबकि छोटे शहर या कस्बे में वही सुविधा सीमित हो सकती है। भारत में दिसंबर 2024 तक 25,202 सार्वजनिक ईवी चार्जिंग स्टेशन दर्ज किए गए थे। सरकार ने पीएम ई ड्राइव योजना के तहत सार्वजनिक चार्जिंग अवसंरचना के लिए 2,000 करोड़ रुपये का प्रावधान भी किया है।

ईवी की चर्चा केवल कार खरीदने वाले व्यक्ति तक सीमित नहीं रहनी चाहिए। इसका संबंध पूरे परिवहन तंत्र से है। दोपहिया और तिपहिया क्षेत्र में इलेक्ट्रिक वाहनों का विस्तार अपेक्षाकृत तेज है। पीएम ई ड्राइव योजना के आंकड़े भी बताते हैं कि इलेक्ट्रिक दोपहिया और तिपहिया वाहनों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। योजना को मार्च 2028 तक कुछ श्रेणियों के लिए बढ़ाया गया है।

लेकिन मध्यमवर्ग के लिए सबसे महत्वपूर्ण सवाल अब भी वही है: क्या ईवी खरीदना सस्ता है या उसे चलाना सस्ता है? दोनों बातें एक नहीं हैं। यदि कोई व्यक्ति साल में बहुत कम किलोमीटर चलता है, उसके लिए महंगी ईवी खरीदकर केवल ईंधन बचाना जरूरी नहीं कि सबसे बड़ा आर्थिक लाभ हो। इसके उलट रोज लंबी दूरी तय करने वाले व्यक्ति के लिए ईंधन की लगातार बचत शुरुआती अतिरिक्त कीमत की भरपाई कर सकती है। इसलिए ईवी का आर्थिक मूल्य व्यक्ति की जरूरत, सालाना दूरी, चार्जिंग सुविधा और वाहन रखने की अवधि पर निर्भर करता है।

ईवी बाजार को आगे बढ़ाने के लिए केवल सब्सिडी देना पर्याप्त नहीं होगा। खरीदार को भरोसा चाहिए कि पांच या सात साल बाद वाहन की बैटरी, सर्विस और पुनर्विक्रय बाजार की स्थिति क्या होगी। कंपनियों को बैटरी की वारंटी, वास्तविक उपयोग अवधि, मरम्मत लागत और पुनर्विक्रय मूल्य से जुड़ी जानकारी अधिक पारदर्शी तरीके से देनी होगी। उपभोक्ता को केवल आकर्षक विज्ञापन नहीं, पूरे जीवनकाल की लागत समझने का अधिकार है। असल परिवर्तन तब होगा जब इलेक्ट्रिक वाहन किसी सरकारी प्रोत्साहन या फैशन के कारण नहीं, बल्कि अपने आर्थिक और व्यावहारिक फायदे के कारण खरीदा जाएगा। इसके लिए कीमत कम होना जरूरी है, लेकिन उससे भी ज्यादा जरूरी है भरोसेमंद चार्जिंग नेटवर्क, बेहतर बैटरी तकनीक, उचित सर्विस लागत और मजबूत पुनर्विक्रय बाजार।

भारत में ईवी का भविष्य केवल तकनीक की सफलता से तय नहीं होगा। उसकी असली परीक्षा मध्यमवर्गीय परिवार के बजट में होगी। जिस दिन एक सामान्य परिवार यह गणना करते हुए ईवी खरीदेगा कि इससे उसका खर्च सचमुच नियंत्रित होगा, न कि केवल पर्यावरण बचाने का भाव पैदा होगा, उस दिन इलेक्ट्रिक वाहन भारत की सड़कों पर एक विकल्प नहीं, मुख्यधारा का वाहन बनना शुरू कर देंगे।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

ईरान युद्ध से डगमगाया रिपब्लिकन का भरोसा

ईरान के साथ युद्ध अब केवल अमेरिका की विदेश नीति का प्रश्न नहीं रह गया है। लंबे समय से जारी संघर्ष ने राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की रणनीति, अमेरिकी कांग्रेस की भूमिका और रिपब्लिकन पार्टी की असहजता को सामने ला दिया है। युद्ध शुरू होने के समय इसे जल्दी समाप्त होने वाली कार्रवाई के रूप में प्रस्तुत किया गया था, लेकिन समय बीतने के साथ उसका आर्थिक और राजनीतिक बोझ बढ़ा है।

कुछ रिपब्लिकन उम्मीदवारों ने युद्ध समाप्त करने की मांग शुरू की है। मिशिगन के माइक रोजर्स और आयोवा की एशली हिंसन जैसे नेताओं का रुख बताता है कि युद्ध अब पार्टी के लिए सहज राजनीतिक मुद्दा नहीं रहा। वे संघर्ष खत्म करने की बात कर रहे हैं, लेकिन ट्रंप के उस फैसले की सीधी आलोचना से बच रहे हैं, जिसके बाद सैन्य अभियान शुरू हुआ। यह स्थिति अमेरिकी राजनीति की एक बड़ी समस्या को दिखाती है। किसी नीति के परिणामों से दूरी बनाना आसान है, लेकिन उसकी शुरुआत पर सवाल उठाना अपने ही दल के नेतृत्व को चुनौती देना माना जा सकता है।

जनमत सर्वेक्षण भी बदलते माहौल की ओर संकेत कर रहे हैं। सितंबर में सीएनएन के सर्वेक्षण में केवल 26 प्रतिशत अमेरिकी ट्रंप के ईरान युद्ध से निपटने के तरीके से संतुष्ट थे, जबकि 73 प्रतिशत असंतुष्ट थे। 64 प्रतिशत ने कहा कि अमेरिका युद्ध नहीं जीत रहा और 70 प्रतिशत ने माना कि संघर्ष ने अमेरिका तथा उसके हितों को नुकसान पहुंचाया है। रिपब्लिकन मतदाताओं में भी समर्थन मार्च के 73 प्रतिशत से घटकर 60

प्रतिशत रह गया। इन आंकड़ों को चुनावी परिणाम का पूर्वानुमान नहीं माना जा सकता, लेकिन वे युद्ध को लेकर सार्वजनिक राय में बदलाव जरूर दिखाते हैं। ईंधन और दूसरी वस्तुओं की कीमतों पर युद्ध का असर सीधे घरेलू अर्थव्यवस्था तक पहुंचता है। यही कारण है कि विदेश नीति धीरे-धीरे रोजमर्रा की राजनीति का विषय बन जाती है। रिपब्लिकन उम्मीदवारों के लिए चुनौती है कि वे मतदाताओं की चिंता व्यक्त करें, लेकिन राष्ट्रपति से खुला टकराव भी न मोल लें।

इस विवाद का सबसे गंभीर पहलू अमेरिकी कांग्रेस की भूमिका है। अमेरिकी संविधान युद्ध की घोषणा का अधिकार कांग्रेस को देता है, जबकि राष्ट्रपति सशस्त्र सेनाओं के सर्वोच्च कमांडर होते हैं। 1973 का वॉर पावर्स एक्ट भी राष्ट्रपति की सैन्य कार्रवाई पर कांग्रेस की भूमिका सुनिश्चित करने के उद्देश्य से बनाया गया था। फिर भी युद्ध शुरू होने के बाद राष्ट्रपति को रोकना कठिन रहा है। सितंबर में सीनेट ने ईरान युद्ध को समाप्त करने या आगे की सैन्य कार्रवाई के लिए कांग्रेस की अनुमति आवश्यक बनाने वाले प्रस्ताव को 50 के मुकाबले 49 मतों से खारिज कर दिया। यह इस तरह के प्रस्ताव पर चौदहवां मतदान था। इससे बुनियादी लोकतांत्रिक सवाल उठता है। यदि कांग्रेस के पास युद्ध पर संवैधानिक अधिकार है, तो सैन्य कार्रवाई शुरू होने के बाद उसकी वास्तविक शक्ति इतनी सीमित क्यों दिखाई देती है? गैर-बाध्यकारी प्रस्ताव राष्ट्रपति को कार्रवाई रोकने के लिए बाध्य नहीं करते।

ट्रंप के बयान भी युद्ध के अंतिम लक्ष्य को लेकर स्पष्टता नहीं देते। उन्होंने ईरान के साथ समझौते की संभावना की बात की है, लेकिन साथ ही कठोर सैन्य कार्रवाई की चेतावनी भी दी है। शुरुआती दौर में तत्काल परिणाम की भाषा इस्तेमाल हुई थी, जबकि बाद में आर्थिक दबाव और होर्मुज जलडमरूमध्य को फिर से खोलने जैसे लक्ष्य अधिक प्रमुख दिखाई दिए। इससे सवाल उठता है कि युद्ध का अंतिम राजनीतिक उद्देश्य क्या है और उसे समाप्त करने का रास्ता क्या होगा।

किसी भी सैन्य अभियान के लिए स्पष्ट राजनीतिक लक्ष्य, कूटनीतिक विकल्प और युद्ध समाप्त करने की योजना जरूरी होती है। यदि उद्देश्य बदलता रहे, तो संघर्ष लंबा खिंच सकता है और उसकी मानवीय तथा आर्थिक लागत बढ़ सकती है।

ईरान युद्ध ने अमेरिकी लोकतंत्र के उस पुराने प्रश्न को फिर सामने ला दिया है कि युद्ध के मामलों में राष्ट्रपति और कांग्रेस के बीच संतुलन कितना होना चाहिए। यह मुद्दा भी किसी एक दल से बड़ा है। यदि युद्ध जारी रखना है तो उसके लक्ष्य और लागत पर स्पष्टता होनी चाहिए। यदि उसे समाप्त करना है तो व्यावहारिक कूटनीतिक रास्ता भी सामने रखना होगा।

युद्ध केवल मोर्चे पर नहीं लड़े जाते - उनकी कीमत अर्थव्यवस्था, संस्थाओं और जनता के भरोसे को भी चुकानी पड़ती है। ईरान संघर्ष ने अमेरिका के सामने यही सवाल रखा है कि सैन्य शक्ति के इस्तेमाल के साथ लोकतांत्रिक जवाबदेही कैसे सुनिश्चित की जाए। इसका उत्तर केवल व्हाइट हाउस नहीं, बल्कि कांग्रेस और अमेरिकी जनता की भूमिका भी तय करेगी।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)